दैनिक जागरण
सफलता के शिखर पर कुशलता के सोपानों से चढ़ा जाता है

बेतुकी आपत्ति

यह अच्छा नहीं कि पुलवामा हमले के बाद बनी जिस राजनीतिक सहमति को कायम रखने की जरूरत थी उसे बरकरार रखने पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इसके लिए सभी पक्ष जिम्मेदार हैं, लेकिन मानों इतना ही पर्याप्त न था, जो अब कूटनीतिक मामलों में भी राजनीतिक दल अलग-अलग सुर में बोलते दिखते रहे हैं। समझना कठिन है कि कांग्रेस को यह सवाल उठाने की क्या जरूरत थी कि प्रधानमंत्री सऊदी अरब के युवराज का स्वागत करने हवाई अड्डे पर क्यों गए और उन्होंने उन्हें गले क्यों लगाया? कूटनीतिक शिष्टाचार के तौर-तरीके कोई पत्थर की लकीर नहीं हैं। किसी भी शासनाध्यक्ष को यह तय करने का अधिकार है कि वह किसी अतिथि शासनाध्यक्ष का स्वागत-सत्कार किस तरह करे। कांग्रेस को यह पता होना चाहिए कि प्रधानमंत्री पहली बार किसी शासनाध्यक्ष की अगवानी करने हवाई अड्डे नहीं गए। उसे यह भी ज्ञात होना चाहिए कि वह विदेशी अतिथियों से देश-विदेश में गले मिलते रहे हैं। ऐसा लगता है कि कांग्रेसी प्रवक्ता महज आलोचना के लिए आलोचना करना चाह रहे थे। यह भारतीय राजनीति में गिरावट का एक नया और छिछला बिंदु ही है कि मुख्य विपक्षी दल विदेशी शासनाध्यक्ष के स्वागत के तौर-तरीके अपने हिसाब से तय करना चाह रहा है।

यह सही है कि सऊदी अरब के युवराज और भारतीय प्रधानमंत्री की ओर से जारी संयुक्त बयान देश की अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं है, लेकिन यह सवाल उठाना निहायत बचकाना राजनीति है कि पाकिस्तान में 20 अरब डॉलर निवेश करने वाले देश के शासक की अगवानी करते समय प्रधानमंत्री उनसे गले क्यों मिले? क्या अगर प्रधानमंत्री ऐसा नहीं करते तो सऊदी अरब भारत के मनमुताबिक संयुक्त बयान जारी करने पर राजी हो जाता या फिर वह पाकिस्तान में निवेश के अपने प्रस्ताव को वापस ले लेता? कांग्रेस विपक्ष में है तो इसका यह मतलब नहीं कि वह कूटनीतिक तौर-तरीकों को विस्मृत करती नजर आए। निःसंदेह यह कोई नई बात नहीं कि सऊदी अरब पाकिस्तान के हितों की चिंता करता है, लेकिन यह नई बात अवश्य है कि पिछले कुछ समय से उसने भारत के प्रति मित्रवत रवैया अपनाया है और इसका एक बड़ा प्रमाण यह है कि उसने वांछित तत्वों को प्रत्यर्पित करने में देर नहीं की है। कांग्रेस अथवा अन्य किसी राजनीतिक दल को इसकी भी अनदेखी नहीं करनी चाहिए कि सऊदी अरब में करीब 27 लाख भारतीय रहते हैं। इसके अतिरिक्त वह भारत की तेल जरूरतों को पूरा करने में भी अग्रणी है। सऊदी अरब या फिर पाकिस्तान के प्रति नरम रुख रखने वाले देश को बातचीत से ही इसके लिए राजी किया जा सकता है कि वह भारतीय हितों की अधिक परवाह करे। मोदी सरकार यही करने की कोशिश कर रही है। अगर कांग्रेस को यह लगता है कि वह इसमें कामयाब नहीं हो पा रही है तो फिर उसे यह बताना चाहिए कि इसके लिए क्या किया जाना चाहिए। यह देखना-सुनना दयनीय है कि इसके बजाय उसकी ओर से ऐसी बातें की जा रही हैं जो कूटनीतिक मर्यादा से इतर हैं। कम से कम कांग्रेस को तो यह अच्छे से पता होना ही चाहिए कि कूटनीति और राजनीति में अंतर होता है।

बेटियों की चिंता

केंद्र एवं राज्य सरकारें देश से लेकर प्रदेशों तक महिलाओं को सशक्त करने की मुहिम में जुटी हैं। रविवार को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने झारखंड के रामगढ़ में देश के तीसरे एवं प्रदेश के पहले महिला इंजीनियरिंग कॉलेज का शिलान्यास किया। इससे सिर्फ एक पखवाड़े पहले प्रधानमंत्री ने जमशेदपुर में प्रदेश के पहले महिला विश्वविद्यालय की आधारशिला रखी। लड़कियों को बेहतर शिक्षा को लेकर यह केंद्र एवं खासकर राज्य सरकार की प्रतिबद्धता को दिखाती है। महिला विवि और इंजीनियरिंग कॉलेज में बेटियां पढ़कर अपने पैरों पर खड़ी हों, उन्हें अच्छी नौकरी मिले यह अच्छा कदम है। एक बेटी शिक्षित होती है, अपने पैरों पर खड़ी होती है तो इससे एक घर नहीं, बल्कि दो घरों को मजबूती मिली है। एक वह घर जहां वह जन्म लेती है, दूसरा वह घर जहां वह शादी के बाद रहती है। यह तो हुई उच्च शिक्षा की बात। राज्य सरकार इससे पहले बेटियों की अच्छी शिक्षा के लिए कस्तूरबा विद्यालयों का भी संचालन करती है। यहां गरीब एवं आदिवासी बेटियों को 12वीं तक की उच्च शिक्षा मुफ्त में मिल रही है। यह तो हुई शिक्षा की बात। सरकार का यह भी प्रयास है कि जो महिलाएं पढ़ नहीं पातीं या जो अपने पैरों पर खड़ा होना चाहती हैं उन्हें स्वयं सहायता के माध्यम से स्वावलंबी बनाया जाए। इसके लिए उन्हें आर्थिक और तकनीकी हर संभव मदद दी जा रही है। झारखंड की लाखों महिलाएं सरकार के इस कदम से आज अपने पैरों पर खड़ी हुई भी हैं। बहरहाल सरकार के अलावा समाज को भी बेटियों को आगे बढ़ाने के लिए प्रयास करना होगा। अभी भी कई मां-बाप हैं जो बेटियों पर बेटों को प्राथमिकता देते हैं, जबकि बेटियों ने हर बार खुद को साबित किया है। जब भी उन्हें मौका मिला है उसे उन्होंने दोनों हाथों से भुनाया है। हमारी उन 18 चैंपियन बेटियों को ही ले लें। हॉकी जूनियर की राष्ट्रीय विजेता झारखंड की ये लड़कियां मुश्किल परिस्थितियों को पारकर आज समाज में सबकी प्रेरणा का स्रोत बनी हुई हैं। बहरहाल सरकार ने जो भी प्रयास किए हैं। उससे यह तो साबित होता है कि हम बेटियों के लिए चिंता कर रहे हैं।

भारत के हित में नहीं स्थिर पाकिस्तान

विवेक काटजू

हमें इस विचार को तिलांजलि देनी होगी कि स्थिर पाकिस्तान ही भारत के हित में है, क्योंकि यदि पड़ोसी इतना बिगड़ैल हो तो उसकी स्थिरता हमारे किसी काम की नहीं

पुलवामा में हुआ आतंकी हमला कश्मीर घाटी के तीन दशकों के रक्तरंजित इतिहास का सबसे वीभत्स हमला है। यह पाकिस्तान की उन आतंकी नीतियों का ही हिस्सा है जिन्हें अंजाम देकर वह भारत को रक्षात्मक रुख अपनाने पर मजबूर करता आया है। ऐसे में भारत की प्रतिक्रिया केवल इसी हमले के आलोक में ही सीमित नहीं रहनी चाहिए। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का बयान इस दिशा में ही संकेत करता है। कोई भी कड़ी कार्रवाई जनाक्रोश को शांत कर देगी, लेकिन भारत को यह भी सोचना होगा कि वह केवल 'जैसे को तैसा' वाली कार्रवाई से संतुष्ट होना चाहेगा या फिर पाकिस्तान में आतंक की जड़ों को उखाड़ने का लक्ष्य तय कर उसे प्राप्त करने की कोशिश करेगा? स्वाभाविक रूप से उसे दूसरा रास्ता ही अपनाना चाहिए, भले ही यह कितना ही मुश्किल क्यों न हो और इसमें चाहे कितना ही समय क्यों न लगे। आखिर भारत ने पाकिस्तानी आतंकवाद को इतने लंबे अर्से तक पनपने ही क्यों दिया, इस प्रश्न पर मंथन करने से पहले हमें कुछ कड़वी सच्चाइयों को भी स्वीकार करना होगा। बीते 25 वर्षों के दौरान भारत के राजनीतिक वर्ग और सुरक्षा प्रतिष्ठान ने पाकिस्तानी आतंक को एक रणनीतिक चुनौती के रूप में ही नहीं लिया। इसे एक राजनीतिक एवं कूटनीतिक प्रबंधन के मसले के रूप में ही देखा गया। जब भी कोई आतंकी हमला होता है तो भारतीय जनता क्रुद्ध हो जाती है और नेता उसे संयत करने की कोशिश करते हैं और कूटनीतिक अभियान शुरू कर देते हैं। इस कवायद में जनता का गुस्सा कुछ समय बाद शांत हो जाता है और समय के साथ भारत-पाकिस्तान के रिश्ते सामान्य नकारात्मकता वाले स्तर पर आ जाते हैं। यह तब तक कायम रहते हैं जब तक अगला आतंकी हमला नहीं हो जाता और फिर यह प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

किसी रणनीतिक चुनौती से निपटने और राजनीतिक एवं कूटनीतिक मसले से जूझने में भारी अंतर होता है। रणनीतिक चुनौती वह होती है जिसमें किसी देश की सुरक्षा या उसकी क्षेत्रीय अखंडता को चुनौती मिलती है या फिर उसकी अर्थव्यवस्था के लिए खतरा पैदा हो जाता है। यदि किसी बाहरी या आंतरिक गतिविधि से सामाजिक शांति और सौहार्द खतरे में हो तो यह भी रणनीतिक चुनौती ही कही जाएगी। ऐसे खतरे जो कानून-व्यवस्था को अस्थाई रूप से प्रभावित करने के साथ अर्थव्यवस्था को भी नुकसान पहुंचाएं, पर उनसे आर्थिक वृद्धि की गाड़ी पटरी से न उतरे और न सामाजिक ढांचे को चोट पहुंचे तो उन्हें रणनीतिक चुनौतियों से कम ही आंका जाता है। इनकी तुलना में रणनीतिक खतरों से निपटने के लिए पूरे देश के संसाधन इस्तेमाल होते हैं। इस क्रम में व्यापक राजनीतिक सहमति बनती है जो सरकारों के बदलने के बावजूद कायम रहती है जिसमें एक-एक कदम समग्र योजना का हिस्सा बन जाता है। यह योजना भी लचीली हो सकती है, पर इसके लक्ष्य एवं उद्देश्य कभी नहीं बदलते।

पाकिस्तानी आतंक एक रणनीतिक चुनौती है, क्योंकि इसके कारण हमें न केवल प्रत्यक्ष रूप से भारी कीमत चुकानी पड़ती है, बल्कि निरंतर सैन्य तैनाती, वित्तीय प्रतिबद्धताओं के अलावा सामाजिक तनाव और राजनीति एवं कूटनीति के मोर्चे पर भी अप्रत्यक्ष रूप से खामियाजा भुगतना पड़ता है। पाकिस्तान ने आतंकवाद को भारत के खिलाफ रणनीतिक सिद्धांत के रूप में इस्तेमाल किया है। परंपरागत सैन्य बलों का इस्तेमाल और परमाणु हथियारों की धमकी इस सिद्धांत के दूसरे पहलू हैं। 1998 में परमाणु परीक्षण के बाद जिम्मेदारी से पेश आने के बजाय पाकिस्तान ने उसकी आड़ में भारत को ब्लैकमेल करना शुरू कर दिया। उसने यह धारणा बना दी कि अगर भारत ने उससे मजबूत अपनी रक्षा क्षमता के दम पर आतंकी हमले का जवाब दिया तो इससे परमाणु युद्ध तक की नौबत आ सकती है।

अवधेश राजपूत

बीते 20 वर्षों से पाकिस्तान भारत और पूरी दुनिया को अपने परमाणु हथियारों की धौंस दिखाता आया है कि भारत के हमले के जवाब में वह उसे अपंग बना सकता है। 2016 में नरेंद्र मोदी ने पाकिस्तान पर सर्जिकल स्ट्राइक कर इस वर्जना को ध्वस्त कर दिया। उनसे पहले किसी भारतीय सरकार ने सेना का ऐसा इस्तेमाल नहीं किया और किया भी तो उसे सार्वजनिक नहीं किया। पाकिस्तान ने सर्जिकल स्ट्राइक से साफ इन्कार इसलिए किया, क्योंकि इससे उस सिद्धांत की हवा निकल जाती कि भारत द्वारा सैन्य बल इस्तेमाल करने से हालात बेकाबू हो सकते हैं।

सेना के इस्तेमाल पर भारत को हिचक नहीं होनी चाहिए। हालांकि किसी एक अभियान से पाकिस्तानी आतंक की कमर नहीं टूटने वाली। खुद मोदी यह स्वीकार करते हैं। हाल में उन्होंने कहा भी था कि पाकिस्तान आसानी से सुधरेगा नहीं। इसका अर्थ है कि सीमित सैन्य कार्रवाई से आतंक खत्म नहीं होगा। इसका यह मतलब भी नहीं कि अगर सरकार को जरूरी लगे तो इससे बचा जाए, लेकिन यह भी नहीं सोचा जा सकता कि पाकिस्तान बदल जाएगा। तमाम खतरों और नुकसान को देखते हुए कोई भी पूर्ण युद्ध नहीं चाहता। तब क्या समाधान हो सकता है?

सबसे पहले तो हमें इस विचार को तिलांजलि देनी होगी कि एक स्थिर पाकिस्तान ही भारत के हित में है। तमाम बुद्धिजीवी मानते हैं कि पड़ोस में अशांति मुश्किलों का कारण बनती है। आमतौर पर यह सही भी है, लेकिन अगर आपका पड़ोसी लगातार बेलगाम होकर अपनी नीचता से बाज न आए तो उसका स्थायित्व किसी काम का नहीं। खासतौर से पाकिस्तान के मामले में तो बिल्कुल भी नहीं जिसकी स्थापना ही भारत विरोध के रूप में हुई हो। भारत को सिर्फ इस वजह से शांत नहीं बैठना चाहिए कि वह पकिस्तान की स्थिरता को नुकसान नहीं पहुंचाना चाहता। उस देश में तमाम नस्लीय, धार्मिक और प्रांतीय विभाजन की दरारें हैं। भारत ने कभी इनका फायदा उठाने के बारे में नहीं सोचा। भारत के पास ऐसा करने की पूरी वजह है और अब उसे इससे हिचकना भी नहीं चाहिए। पाकिस्तान के मित्र और तमाम अन्य देश जरूर भारत को ऐसा करने से रोकेंगे। भारत को इन देशों की सुनने के बजाय उन्हें समझाना चाहिए कि वे पाकिस्तान को अपना रवैया बदलने के लिए कहें।

पाकिस्तानी अर्थव्यवस्था भी बेहद कमजोर है। वह सऊदी अरब के बाद अन्य देशों से विदेशी निवेश के लिए प्रयास कर रहा है। सीपैक में चीन भी 60 अरब डॉलर का निवेश कर रहा है, लेकिन उसकी अर्थव्यवस्था केवल विदेशी सहयोग के भरोसे आगे नहीं बढ़ सकती। उसे आंतरिक मजबूती भी चाहिए। यह तभी संभव है जब वहां शांति होगी। भारत के पास वह क्षमता है जिससे वह पाकिस्तानी अर्थव्यवस्था को चुनौती दे सकता है। पाकिस्तानी आतंकवाद को चुनौती देने की पूर्व निर्धारित शर्त यह भी है कि भारत की राष्ट्रीय एकता और सामाजिक सौहार्द भी अक्षुण्ण रहे। इतिहास गवाह है कि विदेशी आततायियों ने धर्म और जाति के आधार पर बांटकर ही हमारा फायदा उठाया। पाकिस्तान भी हमारे संवेदनशील इलाकों में लगातार समस्याएं पैदा कर रहा है। ऐसे में यह सभी दलों और नेताओं का दायित्व बन जाता है कि वे पाकिस्तान के इन मंसूबों को कामयाब न होने दें।

(पाकिस्तान मामलों के जानकार लेखक विदेश मंत्रालय में सचिव रहे हैं)

response@jagran.com

समझनी होगी मातृभाषा की महत्ता

अतुल कोठारी

मातृभाषा ज्ञान, शांति, अधिकार, समावेश एवं विविधता हेतु तो जरूरी है ही, वह विकास प्रक्रिया में भी सहायक बनती है

वर्ष 1952 में इसी दिन यानी 21 फरवरी को बांग्लादेश (तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान) के ढाका विश्वविद्यालय, जगन्नाथ विश्वविद्यालय और चिकित्सा महाविद्यालय के छात्रों द्वारा बांग्ला को राष्ट्रभाषा घोषित किए जाने हेतु आंदोलन किया गया जिसमें अनेक छात्रों ने पुलिस की गोलियों का शिकार होकर अपनी मातृभाषा के लिए प्राण न्योछावर किए। मातृभाषा के लिए दिए गए इसी बलिदान की स्मृति में यूनेस्को ने वर्ष 1999 में इस दिन को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस के रूप में मनाने की शुरुआत की जिसे संयुक्त राष्ट्र ने 2008 में स्वीकृति दी। यूनेस्को के अनुसार भाषा केवल संपर्क, शिक्षा या विकास का माध्यम न होकर व्यक्ति की विशिष्ट पहचान है, उसकी संस्कृति, परंपरा एवं इतिहास का कोष है। भाषा के इसी महत्व को दर्शाने के लिए यूनेस्को 2019 को 'स्वदेशी भाषाओं का वर्ष' के रूप में मना रहा है। मातृभाषा के महत्व के संदर्भ में यूनेस्को कहता है कि मातृभाषा ज्ञान, शांति, अधिकार, समावेश एवं विविधता हेतु आवश्यक है। हर भाषा अपने साथ एक ऐसी विशिष्ट ज्ञान परंपरा का संवहन करती है और राष्ट्रों की विकास प्रक्रिया में सहायक बनकर शांति को बढ़ावा देने का कार्य करती है। मातृभाषा देश के लोगों को शिक्षा आदि जैसे मूलभूत अधिकार प्रदान करती है और इसमें समाज के सभी वर्गों का समावेश सुनिश्चित करती है। इस प्रकार समाज के सांस्कृतिक मूल्यों की विरासत को संजोने का कार्य भी मातृभाषा ही करती है। मातृभाषा के संदर्भ में कुछ विद्वानों का मानना है कि 'मां' की भाषा ही मातृभाषा है। यह पूर्ण सत्य नहीं है, मां की भाषा के साथ-साथ बच्चे का शैशव और बाल्यकाल जहां बीतता है, उस माहौल में ही जननी भाव है। जिस परिवेश में बच्चे पलते है वहां जो भाषा वह सीखता है वह भाषा उस बच्चे की मातृभाषा कहलाती है। यहां परिवेश से अर्थ परिवार एवं उस परिवार के सांस्कृतिक मूल्यों से है।

हमारे देश में भाषा के प्रति अनेक प्रकार के भ्रम फैले हैं जिनमें एक अत्यंत महत्वपूर्ण भ्रम है कि अंग्रेजी विकास की भाषा है। जबकि इस बात से यूनेस्को सहित अनेक संस्थानों के अनुसंधान यह सिद्ध कर चुके हैं कि अपनी भाषा में शिक्षा से ही बच्चे का सही मायने में विकास हो पाता है। इस उद्देश्य हेतु मातृभाषा में शिक्षा पूर्ण रूप से वैज्ञानिक दृष्टि है। इसी मत को शिक्षा से संबंधित सभी आयोगों ने भी माना है। भारतीय वैज्ञानिक सीवी श्रीनाथ शास्त्री के अनुसार अंग्रेजी माध्यम से इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त करने वाले की तुलना में भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़े छात्र कहीं अधिक उत्तम वैज्ञानिक अनुसंधान करते हैं। महात्मा गांधी ने कहा था, 'विदेशी माध्यम ने बच्चों की तंत्रिकाओं पर भार डाला है, उन्हें रट्टू

बनाया है, वे सृजन के लायक नहीं रहे.....विदेशी भाषा ने देसी भाषाओं के विकास को बाधित किया है।' इसी संदर्भ में भारत के पूर्व राष्ट्रपति एवं महान वैज्ञानिक डॉ. अब्दुल कलाम के शब्दों का यहां उल्लेख आवश्यक हो जाता है, 'मैं अच्छा वैज्ञानिक इसलिए बन पाया, क्योंकि मैंने गणित और विज्ञान की शिक्षा मातृभाषा में प्राप्त की।' इसी प्रकार माइक्रोसॉफ्ट के सेवानिवृत्त वरिष्ठ वैज्ञानिक संक्रांत सानू ने अपनी पुस्तक में दिए गए तथ्यों में यह कहा है कि दुनिया में सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी के लिहाज से शीर्ष 20 देश अपना मुख्य काम मातृभाषा में ही कर रहे हैं। इनमें चार देश अंग्रेजी भाषी हैं, क्योंकि उनकी मातृभाषा अंग्रेजी है। वह आगे लिखते हैं कि विश्व के सकल घरेलू उत्पाद में सबसे पिछड़े हुए 20 देशों में विदेशी भाषा या अपनी और विदेशी, दोनों भाषा में उच्च शिक्षा दी जा रही हैं और शासन-प्रशासन का कार्य भी इसी प्रकार किया जाता है।

इस कथन की सत्यता को प्रमाणित करने की दृष्टि से भारतीयों को प्राप्त नोबेल पुरस्कार और अपनी भाषा में शिक्षा देने वाले देश इजरायल, जापान, जर्मनी आदि के विद्वानों द्वारा प्राप्त नोबेल पुरस्कारों की तुलना करने से स्थिति अधिक स्पष्ट हो जाती है। स्वदेशी भाषाओं के अनन्य महत्व के बावजूद हम अपनी भाषाओं के संवर्धन में पिछड़ रहे है। वर्ष 1961 की जनगणना के अनुसार भारत में 1,652 भाषाएं दर्ज थीं। 1971 आते-आते यह आंकड़ा 808 रह गया। पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, 2013 के अनुसार पिछले 50 वर्षों में 220 से अधिक भारतीय भाषाओं को खो दिया गया है और 197 और भाषाएं लुप्तप्राय होने के कगार पर हैं।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार और भारत सरकार के आधिकारिक आंकड़ों के हिसाब से देश में 121 आधिकारिक भाषाएं हैं। वहीं पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के अनुसार भारत में 780 भाषाएं मौजूद हैं। लगभग 100 और भाषाओं के अस्तित्व में होने की संभावना भी जाहिर की गई है। महाराष्ट्र की वदारी एवं कोल्हाटी, कर्नाटक-तेलंगाना की गोल्ला, गोसारी ऐसी भारतीय भाषाओं के उदाहरण हैं जिनके बोलने वालों की संख्या दस हजार से कम होने की वजह से वे भाषा सूची से बाहर हैं। जबकि अधुनि, दिची, घल्लू, हेल्गो और बो कुछ ऐसी भाषाओं के नाम हैं जो देश में विलुप्त हो चुकी हैं।

197 लुप्तप्राय भाषाओं में से भारत में केवल बोडो और मैतई को आधिकारिक दर्जा प्राप्त है, क्योंकि उनके पास लेखन प्रणाली है। भारत जैसे देश में जहां ज्ञान परंपरा मुख्य रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी मौखिक ही चलती आई है वहां लेखन प्रणाली के अभाव में भाषा के रूप में गणना नहीं करना देश की सांस्कृतिक ऐतिहासिक वास्तविकताओं से परे है। इस प्रकार के नियमों से भी अनेक भाषाएं लुप्तप्राय हो रही हैं। भारत सरकार को अविलंब ऐसे नियमों पर पुनःविचार कर समीक्षा करनी चाहिए ताकि 2021 की जनगणना में सुधार करके वास्तविक जनगणना हो सके।

मातृभाषा केवल ज्ञान प्राप्ति ही नहीं बल्कि मानवाधिकार संरक्षण, सुशासन, शांति-निर्माण, सामंजस्य और सतत विकास के हेतु एक आधारभूत अर्हता है। इसी प्रकार सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और समाज में सामंजस्य के लिए स्वदेशी भाषाएं महत्व रखती हैं। विविधता में हमारे विश्वास के बावजूद हम विशेष रूप से भाषाओं और बोलियों के संदर्भ में उनका संवर्धन करने में सक्षम नहीं दिख रहे हैं। इसी कारण संयुक्त राष्ट्र ने 2019 को स्वदेशी भाषाओं का वर्ष घोषित किया, ताकि उन्हें संरक्षित, पुनर्जीवित करने और बढ़ावा देने के लिए तत्काल कार्रवाई को प्रोत्साहित किया जा सके।

(लेखक शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सेवा

सेवा मनुष्य का सबसे बड़ा गुण है जो उसे अन्य प्राणियों से श्रेष्ठतम बनाता है। सेवा मानवता की अद्भुत जीवन रेखा है। सेवा धर्म परम गहन होने से योगियों के लिए अगम है। विवेक, बुद्धि, काल और समय का विचार करके सेवाधर्म का निर्वहन होता है। सेवा के समान कोई तप और यज्ञ नहीं है। हनुमानजी सेवा और आत्मसमर्पण के प्रतीक हैं। भारतीय चिंतन में सेवा जीवन शैली का एक विशिष्ट अंग है। सामाजिक सेवा कीर्ति बढ़ाती है। सेवा परमात्मतत्व, वरदान, यज्ञ, तप और त्याग है। सेवा से परमतत्व सिद्ध होता है। सेवा का वास तप के मूल में है। इसलिए यह वरदान है। सेवाधर्म में स्वार्थ का अभाव होता है। सेवा का भाव परिवार और मां की गोद से उपजता है। यह सबसे बड़ा संस्कार होता है। सेवा करने की तत्परता महानता का लक्षण है। दूसरों के लिए निःस्वार्थ भाव से किया गया कार्य सेवा है। सेवा का अर्थ है देने के अलावा न लेने का संकल्प। सेवाव्रत सदाचरण का प्रतीक है। माता-पिता, आचार्य एवं अतिथि की सेवा करना देवपूजा है।

माता-पिता की सेवा से बढ़कर कोई तप नहीं है। सेवा का संस्कार महान बनाता है। सेवाव्रती तेजस्वी, कर्मनिष्ठ, उन्नत और विलक्षण होते हैं। निष्काम सेवा जीवन को निखारती है। मानवता की सेवा ईश्वर की पूजा है। सेवा में ही जीवन है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि त्याग और सेवा भारत के दो महान आदर्श हैं। इन आदर्शों को पूरा करने की दिशा में तीव्र गति से कार्य कीजिए। शेष अपने आप ठीक हो जाएगा। वही जीवित हैं, जो दूसरों की सेवा के लिए जीते हैं। सेवा धर्म की पावन मंदाकिनी सबका मंगल करती है। यह लोक साधना का सहज संचरण है।

सेवा मानवीय गुण है और निष्काम सेवा का फल आनंद है। यही कारण है कि दुनिया के सभी धर्मों ने सेवा को अत्यंत महत्व दिया है। ईसा मसीह ने कहा है कि जो निर्बलों और असहाय लोगों की सेवा करता है, उस पर परमेश्वर अपनी कृपा की वर्षा करता है। सेवा के भी कई प्रकार हैं। जैसे शारीरिक रूप से किसी की सेवा करना, किसी व्यक्ति को सही विचार देकर उसे सही कर्तव्यों का ज्ञान कराना और निःस्वार्थ भाव से अभावग्रस्त व्यक्ति की धन से सेवा करना आदि। जीवन में सेवा के ऐसे भाव को आत्मसात करना ही चाहिए।

डॉ. हरि प्रसाद दुबे

भयावह होती स्थिति

मिताली जैन

आज जिस तरह से पूरा देश नशे की मार से तड़प रहा है, उसके कारण यकीनन देश के विकास में बाधा उत्पन्न हो रही है

हाल ही में एम्स की मदद से सामाजिक न्याय एवं अधिकारित मंत्रालय द्वारा कराए गए सर्वे के अनुसार देश में 28 करोड़ से ज्यादा लोग नशा करते हैं। इनमें 16 करोड़ लोग शराब का इस्तेमाल करते हैं, जबकि तीन करोड़ से ज्यादा लोग भांग और चरस जैसे नशे में लिप्त हैं। वहीं सवा दो करोड़ लोग ड्रग्स का भी इस्तेमाल करते हैं। इस सर्वे की सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि करीब 6 करोड़ लोग ऐसे भी हैं, जिनकी शराब एवं दूसरे नशीले पदार्थों पर निर्भरता इस कदर बढ़ चुकी है कि उन्हें तुरंत इलाज की जरूरत है। ये आंकड़े साफतौर पर जाहिर करते हैं कि पूरे देश में नशे का कारोबार किस तरह फल-फूल रहा है। वर्ल्ड ड्रग्स रिपोर्ट 2011 भी बताती है कि दक्षिण एशिया में भारत ड्रग्स का सबसे बड़ा बाजार है। यहां 2009 से 2011 के बीच 1.4 अरब डॉलर की ड्रग्स खरीदी-बेची गई।

दुख की बात है कि इस लिस्ट से बच्चे या महिलाएं भी अछूती नहीं हैं। रिपोर्ट के अनुसार देश में 10 साल के बच्चे भी नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं। देश के करीब साढ़े चार लाख बच्चों को स्प्रे पेंट, मार्कर, ग्लू और दर्द निवारक दवाइयों की लत लग चुकी है और वे नशे के तौर पर इनका इस्तेमाल करते हैं।

कुछ लोग नशा करने पीछे यह तर्क देते हैं कि मादक पदार्थों के सेवन से व्यक्ति की सृजनशीलता बढ़ती है और इससे व्यक्ति में सोच-विचार की क्षमता, एकाग्रता तथा यौन सुख बढ़ता है, लेकिन वास्तविकता इसके बिल्कुल उलट है। नशे के शिकार लोगों की सोच-विचार की क्षमता और इसकी स्पष्टता खत्म हो जाती है। कभी-कभी तो व्यक्ति नशे में अमानवीय कृत्य भी कर देता है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की एक रिपोर्ट के अनुसार दुष्कर्म, हत्या, लूट, डकैती आदि वारदातों में कहीं न कहीं नशा एक अहम भूमिका निभाता है। दरअसल अपराध करने के लिए जिस उत्तेजना, मानसिक उद्वेग और दिमागी तनाव की जरूरत होती है उसकी पूर्ति ये नशा करता है। जिसका सेवन मस्तिष्क के लिए एक उत्प्रेरक की तरह काम करता है। नशे में व्यक्ति सही-गलत की पहचान नहीं कर पाता और कई गलत कृत्यों को भी अंजाम दे देता है।

इस प्रकार नशे के चंगुल में फंसे देश के युवा अपने जीवन के साथ-साथ दूसरों के लिए भी खतरा बन जाते हैं और इस नशे को खरीदने के लिए वे जिस पैसे का इस्तेमाल करते हैं, उसका बाद में दुरुपयोग भी होता है। अब समय आ गया है कि देश के नागरिकों को नशे की गिरफ्त से बाहर निकालने के लिए कुछ ठोस कदम उठाए जाएं। सिर्फ नशामुक्ति केंद्र बना देने से काम नहीं चलने वाला, बल्कि ऐसे भी प्रयास किए जाने चाहिए, जिसके कारण लोगों का झुकाव नशे की तरफ हो ही नहीं। नशे के कारोबार पर रोक लगाने के लिए सख्ती बरतने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त हालत में सुधार लाने के लिए परिवार की भूमिका भी अहम है। अगर माता-पिता बचपन से ही बच्चों को घर में विश्वासपूर्ण एवं दोस्ताना माहौल दें तो शायद वे दूसरों की बातों में न आएं। इसके अतिरिक्त बच्चों एवं युवाओं को नशे के दुष्परिणामों से अवगत कराना भी बेहद आवश्यक है ताकि वे इस राह पर अपने कदम रखने से पहले सौ बार सोचें।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

आतंकवाद पर भारत की विफलता

राजीव सचान के लेख 'राजनीतिक नेतृत्व की नाकामी के तीन दशक' से यही ध्वनित हो रहा है कि पिछले तीन दशकों से पाक पोषित आतंकवाद से आहत और अपमानित होने वाला भारत अपनी सत्तालोलुप राजनीति के कारण आतंकवाद और नक्सलवाद के संदर्भ में कितना विफल रहा है। भारत-भूमि पर होने वाले संसद, मुंबई, उड़ी और पुलवामा जैसे भीषण आतंकी हमले इसकी बानगी हैं। भारत ने अपने राजनीतिक हितों को साधने के लिए पाक पोषित आतंकवादियों को पनाह देने वाले अपने ही देश के देशद्रोहियों पर कभी कठोर कार्रवाई नहीं की, उल्टे उन्हें मासूम और भटका हुआ बताकर आतंकवादियों की पनाहगाह को और अधिक महफूज बना दिया। वरना कोई वजह नहीं थी कि आतंकवादियों को बचाने के लिए भारतीय सेना पर पत्थरबाजी करने वाले कश्मीर घाटी के पत्थरबाजों को भाजपा समर्थित महबूबा मुफ्ती की सरकार द्वारा सरकारी माफी दे दी जाती और बहादुर सैनिकों के ऊपर इन पत्थरबाजों के उत्पीड़न के आरोप में मुकदमे लाद दिए जाते। कश्मीर घाटी में पिछले तीन दशकों से सक्रिय आतंकवाद का यदि तत्कालीन राजनीतिक नेतृत्व द्वारा ठीक से सामना किया जाता तो आज कश्मीर घाटी हिंदू विहीन नहीं होती। इस संदर्भ में वर्तमान केंद्रीय नेतृत्व भी बहुत देर बाद जागा है। मोदी सरकार के निर्देशन में सेना के ऑलआउट ऑपरेशन द्वारा आतंकवादियों की कमर जरूर तोड़ी गई है, लेकिन उड़ी हमले के बाद सर्जिकल स्ट्राइक के साथ यदि अमेरिकी स्टाइल में इस हमले के गुनाहगार आतंकी सरगना मसूद अजहर को भी जिंदा या मुर्दा पकड़कर भारत में लाया जाता तो पुलवामा जैसे भीषण आतंकी हमलों पर विराम लग जाता। अतः अब आवश्यकता इस बात की है कि भारत अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं से बाहर निकलकर पुलवामा के अपमानजनक आघात का बदला ले ताकि वैश्विक स्तर पर भारत की साख कायम रह सके।

pandeyvp1960@gmail.com

पाक को सुबूत देना बेकार

कुलभूषण जाधव के मामले में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में सुनवाई के दौरान पाक ने अपनी आदत के अनुसार झूठ बोलने की आदत को नहीं छोड़ा, लेकिन भारतीय रणनीति से पाक के सभी झूठ सामने आ आए। पाकिस्तान कितना झूठ बोलता है इसका अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि पुलवामा घटना में जैश-ए-मोहम्मद के जिम्मेदारी लेने के बाद भी पाक प्रधानमंत्री भारत से सुबूत की बात कर रहे हैं। हालांकि पाकिस्तान की केवल आदत है सुबूत मांगने की, उस पर कार्रवाई करने की उसकी मंशा कदापि नहीं होती। पाकिस्तान अगर इतना जिम्मेदार देश होता तो मुंबई और पठानकोट हमले के दोषियों को जरूर सजा देता, लेकिन उसने ऐसा आज तक नहीं किया और हमेशा सुबूतों को अपर्याप्त बताता रहता है। इसलिए ऐसे गैर-जिम्मेदार मुल्क को सुबूत देकर भी पत्थर पर सिर मारने जैसा होगा। सुबूत वहीं दिए जाते हैं जहां पर कोई सुनवाई हो। जिसकी मंशा केवल धोखेबाजी की हो और बुनियाद झूठ पर टिकी हो उससे क